पटना उच्च न्यायालय के क्षेत्राधिकार में

आपराधिक विविध संख्या-28002/2016

थाना कांड संख्या -176 वर्ष-2015 थाना-गमहरिया जिला- मधेपुरा से उत्पन्न

==

बिजय कुमार उर्फ बिजय कुमार बिमल उर्फ श्री डॉ. विजय कुमार बिमल उर्फ विजय कुमार बिमल, पुत्र - श्री पुलकित प्रसाद यादव, निवासी मोहल्ला- विद्यापुरी, वार्ड संख्या 18, मधेपुरा, डाकघर और थाना मधेपुरा, जिला- मधेपुरा

.......याचिकाकर्ता

बनाम

1. बिहार राज्य

2. ध्रुव कुमार, पुत्र- याचिकाकर्ता को अनजान वर्तमान में सर्कल अधिकारी, गमहरिया, डाकघर और थाना- गमहरिया, जिला- मधेपुरा के रूप में तैनात|

........विरोधी पक्ष

==

उपस्थिति:

याचिकाकर्ता/ओ के लिए	:	श्री शशि भूषण कुमार मंगलम, अधिवक्ता श्री अवनीश कुमार, अधिवक्ता श्री विकास कुमार सिंह, अधिवक्ता
विरोधी दलों के अधिवक्ता	:	श्री उपेंद्र कुमार, एपीपी

==

अधिनियम/धाराएं/नियम:

आईपीसी की धारा 188, 171एफ, 171सी

सीआरपीसी की धाराएं 155, 195(1)(ए)

संदर्भित मामले:

ललिता कुमारी बनाम उत्तर प्रदेश राज्य, (2014) 2 एससीसी 1

उत्तर प्रदेश राज्य बनाम माता भीख मामला [1994 (4) एससीसी95]

सी. मुनियप्पन बनाम टी.एन. राज्य, (2010) 9 एससीसी 567

अपूर्व घिया बनाम छत्तीसगढ़ राज्य, 2020 एससीसी ऑनलाइन छः 454

भारत संघ बनाम अशोक कुमार शर्मा, (2021) 12 एससीसी 674

हरियाणा राज्य बनाम भजन लाल, [1992 सप (1) एससीसी 335]

याचिका - उस आदेश के खिलाफ दायर की गई जिसमें एसीजेएम ने भारतीय दंड संहिता की धारा 188/171C के तहत अपराध का संज्ञान लिया।

सर्किल अधिकारी की लिखित रिपोर्ट पर, याचिकाकर्ता के खिलाफ भारतीय दंड संहिता की धारा 188/171C के तहत अपराध का एफ.आई.आर. दर्ज किया गया।

निर्णय - मजिस्ट्रेट को पुलिस रिपोर्ट पर धारा 188 आईपीसी के तहत अपराध का संज्ञान लेने का अधिकार नहीं है। वह केवल उस सार्वजनिक अधिकारी की शिकायत पर या उसके प्रशासनिक उच्च अधिकारी की शिकायत पर उस अपराध का संज्ञान ले सकते हैं, जिसका आदेश उल्लंघन किया गया हो। (पैरा 14)

धारा 195 सीआरपीसी के तहत प्रावधान अनिवार्य हैं और अदालत के पास इन अपराधों का संज्ञान लेने का अधिकार नहीं है, जब तक संबंधित सार्वजनिक अधिकारी की लिखित शिकायत नहीं की जाती, जिसके बिना धारा 188 आईपीसी के तहत मुकदमा प्रारंभ से ही अवैध हो जाएगा। (पैरा 16)

सक्षम सार्वजनिक अधिकारी को मजिस्ट्रेट के समक्ष धारा 188 आईपीसी के तहत अभियुक्त के खिलाफ शिकायत दर्ज करनी होती है और केवल तभी मजिस्ट्रेट उस अपराध का संज्ञान ले सकते हैं। (पैरा 21)

लिखित रिपोर्ट का अवलोकन करने पर यह स्पष्ट रूप से सामने आता है कि उल्लंघन किए गए आदेश का कोई संदर्भ नहीं है, इसके अलावा अन्य किसी तत्व की धारा 188 आईपीसी के तहत अपराध को साबित करने के लिए कोई सामग्री नहीं है। (पैरा 23)

धारा 171C आईपीसी कोई दंडात्मक प्रावधान नहीं है। यह केवल "चुनाव में अनुचित प्रभाव" को परिभाषित करता है। दंड देने वाली धारा 171F आईपीसी है, जो चुनाव में अनुचित प्रभाव या पहचान की धारा से संबंधित अपराधों के लिए दंड निर्धारित करती है। लेकिन यहां तक कि धारा 171F भी लिखित रिपोर्ट के आधार पर लागू नहीं होती क्योंकि इसमें कोई आरोप नहीं है कि याचिकाकर्ता ने किसी उम्मीदवार या मतदाता को धमकी दी हो या प्रलोभित किया हो। इसलिए, धारा 171F और धारा 171C आईपीसी के तहत कोई प्रथम दृष्टया अपराध नहीं बनता। (पैरा 24)

इसके अतिरिक्त, धारा 171F आईपीसी के तहत अपराध गैर-संज्ञेय है और इसलिए धारा 155 सीआरपीसी के तहत पुलिस न तो एफ.आई.आर. दर्ज कर सकती है, न ही अपने आप जांच कर सकती है। (पैरा 25)

याचिका मंजूर की जाती है। (पैरा 29)

==

पटना उच्च न्यायालय का न्याय निर्देश

==

कोरमः माननीय न्यायमूर्ति श्री जितेंद्र कुमार

सीएवी निर्णय

तिथि - 07-01-2025

वर्तमान याचिका को धारा 482 दं.प्र.स. के तहत श्री सुनील कुमार सिंह- III, विद्वान ऐ.सी.जे.एम. IV, मधेपुरा द्वारा पारित आदेश दिनांकित 07.04.2016 के खिलाफ दायर किया गया है, जिसके द्वारा विद्वान ऐ.सी.जे.एम. ने भा द वि की धारा 188/171 सी के तहत दंडनीय अपराध का संज्ञान लिया है।

2. मामले के प्रासंगिक तथ्य यह हैं कि उड़ान दस्ते के सर्कल अधिकारी-सह-प्रभारी अधिकारी की लिखित आवेदन पर, गमरिया थाना का मामला संख्या

176/2015, याचिकाकर्ता के खिलाफ भारतीय दंड संहिता की धारा 188/171 सी के तहत दंडनीय अपराध के लिए 31.10.2015 को दर्ज किया गया था।

3. लिखित आवेदन के अनुसार, दिनांक 31.10.2015 को दिन के 1:30 बजे याचिकाकर्ता, जो बिहार आम विधानसभा चुनाव 2015 के लिए एक भाजपा के उम्मीदवार थे, अपनी पार्टी के कार्यकर्ताओं के साथ राज्य राजमार्ग पर गमहरिया बाजार में दस से अधिक दोपहिया वाहनों और दो से अधिक चार पहिया वाहनों के साथ रोड शो कर रहे थे।यहाँ तक कि घटना की वीडियोग्राफी भी सांख्यिकीय निगरानी दल के अधिकारी द्वारा की गई थी।

4. मैंने याचिकाकर्ता के विद्वान वकील को सुना और राज्य के लिए एपीपी को सुना और रिकॉर्ड पर मौजूद सामग्री का अध्ययन किया।

5. याचिकाकर्ता के विद्वान वकील तर्क करते हैं कि याचिकाकर्ता निर्दोष है और उसे इस मामले में गलत तरीके से फंसाया गया है। वह आगे समर्पित करते हैं कि लिखित आवेदन में लगाए गए आरोप के अनुसार, धारा 188 या आईपीसी की धारा 171 सी के तहत कोई मामला नहीं बनता है। लिखित आवेदन में राज्य सरकार के किसी भी आदेश/घोषणा का कोई संदर्भ नहीं दिया गया है, जिसका याचिकाकर्ता द्वारा उल्लंघन किया गया है, न ही लिखित आवेदन में कोई आरोप लगाया गया है कि याचिकाकर्ता की कथित अवज्ञा ने किसी भी वैध रूप से नियोजित व्यक्ति को बाधा, झुंझलाहट या चोट या जोखिम पहुँचाया है या पहुँचाने की प्रवृत्ति है, न ही ऐसा कोई आरोप है कि कथित अवज्ञा ने मानव जीवन, स्वास्थ्य या सुरक्षा या दंगा या झगड़े के लिए खतरा पैदा करती है या करने की प्रवृत्ति रखती है। इसलिए, मामले के कथित तथ्यों और परिस्थितियों में भा द वि की धारा 188 लागु नहीं होती है।

6. उन्होंने यह भी समर्पित किया है कि भा द वि की धारा 171सी भी कथित तथ्यों और परिस्थितियों से आकर्षित नहीं है। ऐसा कोई आरोप नहीं है कि याचिकाकर्ता ने किसी भी मतदाता के किसी भी चुनावी अधिकार के स्वतंत्र प्रयोग में हस्तक्षेप किया है या हस्तक्षेप करने की प्रवृत्ति दिखाई है।

7. उन्होंने आगे समर्पित किया कि भा द वि की धारा 188 के तहत विद्वान मजिस्ट्रेट का संज्ञान भी धारा 195 (1) (ए) दं प्र स को देखते हुए टिकाऊ नहीं है, जिसमें यह प्रावधान है कि कोई भी न्यायालय भारतीय दंड संहिता की धारा 172 से 188 (दोनों शामिल) के तहत दंडनीय किसी भी अपराध का संज्ञान नहीं लेगा, सिवाय किसी संबंधित लोक सेवक या किसी अन्य लोक सेवक की लिखित शिकायत के, जिसके वह प्रशासनिक रूप से अधीनस्थ है। लेकिन इस मामले में संबंधित लोक सेवक द्वारा कोई शिकायत दर्ज नहीं कराई गई थी। शिकायत के स्थान पर, पुलिस के समक्ष लिखित आवेदन समर्पित की गई, जिसने उक्त लिखित आवेदन के आधार पर प्राथमिकी दर्ज की और जांच के बाद आरोप पत्र समर्पित किया गया और जिसके आधार पर, भा द वि की धारा 188 और 171 सी के तहत दंडनीय अपराध का संज्ञान विद्वान मजिस्ट्रेट द्वारा याचिकाकर्ता के खिलाफ आक्षेपित आदेश द्वारा लिया गया।

8. हालांकि, राज्य के लिए विद्वान एपीपी द्वारा आक्षेपित आदेश का बचाव करते हुए कहा गया कि इसमें कोई अवैधता या दोष नहीं है और वर्तमान याचिका खारिज होने योग्य है।

9. अपनी दलील को साबित करने के लिए, वह समर्पित करते है कि भा द वि की धारा 188 के तहत अपराध एक संज्ञेय अपराध है और इसलिए, पुलिस ने सही ढंग से प्रथम सूचना रिपोर्ट दर्ज की है और आरोप पत्र समर्पित किया है और विद्वान मजिस्ट्रेट ने याचिकाकर्ता के खिलाफ भा द वि की धारा 188 और 171 सी के तहत

दंडनीय अपराध का संज्ञान लेते हुए उचित आदेश पारित किया है। उन्होंने **ललिता कुमारी बनाम उत्तर प्रदेश राज्य, (2014) 2 एस. सी. सी.** 1 का हवाला दिया है और उस पर भरोसा किया है|

10. पक्षों की प्रतिद्वंदी समर्पित प्रविष्टियों को देखते हुए, यहाँ पर धारा 188 और धारा 171 सी भा द वि का उल्लेख करना उचित होगा, जो इस प्रकार हैं:

"188. लोक सेवक द्वारा विधिवत घोषित आदेश की अवज्ञा-

जो कोई यह जानते हुए कि वह ऐसे लोक सेवक द्वारा प्रख्यापित किसी आदेश से, जो ऐसे आदेश प्रख्यापित/ जारी करने के लिए बिधिपुर्वक रूप से सशक्त है लोक सेवक द्वारा घोषित आदेश द्वारा, उसे किसी निश्चित कार्य से दूर रहने या अपने कब्जे में या अपने प्रबंधन के तहत कुछ संपत्ति के साथ कुछ आदेश लेने/कोई विशेष व्यबस्था करने का निर्देश दिया जाता है, वह ऐसे निर्देश की अवज्ञा करता है।

यदि ऐसी अवज्ञा किसी भी वैध रूप से नियोजित किसी व्यक्ति को बाधा, झुंझलाहट या चोट, या बाधा, झुंझलाहट या चोट का खतरा पैदा करती है, या कारित करने की प्रवृति रखती हो, तो उसे साधारण कारावास से दंडित किया जाएगा जो एक महीने तक बढ़ सकता है या जुर्माने से जो दो सौ रुपये तक बढ़ सकता है, या दोनों से दंडित किया जाएगा।

और यदि ऐसी अवज्ञा मानव जीवन, स्वास्थ्य या सुरक्षा के लिए खतरा पैदा करती है या प्रवृति करती है, या दंगा या कलह का कारण बनती है या प्रवृति रखती है, तो दोनों में से किसी एक के कारावास से, जो छह महीने तक हो सकता है, या जुर्माने से, जो एक हजार रुपये तक हो सकता है, या दोनों से दंडित किया जाएगा।

स्पष्टीकरण-— यह आवश्यक नहीं है कि अपराधी का इरादा नुकसान पहुँचाने का हो, या वह यह सोचे कि उसकी अवज्ञा से नुकसान पहुँचने की संभावना है। यह पर्याप्त है कि वह उस आदेश के बारे में जानता है जिसकी वह अवज्ञा करता है, और यह कि उसकी अवज्ञा से नुकसान होता है, या होने की संभावना है।

171 ग. चुनावों में अनुचित प्रभाव-

(1) जो कोई भी स्वेच्छा से किसी भी चुनावी अधिकार के स्वतंत्र प्रयोग में हस्तक्षेप करता है या हस्तक्षेप करने का प्रयास करता है, वह चुनाव में अनुचित प्रभाव डालने का अपराध करता है।

(2) उप-धारा (1) के प्रावधानों की व्यापकता पर प्रतिकूल प्रभाव डाले बिना, जो कोई भी -

(क) किसी भी उम्मीदवार या मतदाता, या किसी ऐसे व्यक्ति को, जिसमें कोई उम्मीदवार या मतदाता हितबद्ध है, किसी भी प्रकार की क्षति पहुचने की धमकी देता है, या

(ख) किसी उम्मीदवार या मतदाता को यह विश्वास करने के लिए प्रेरित करता है या प्रेरित करने का प्रयास करता है कि वह या कोई व्यक्ति जिसमें वह हितबद्ध है, वह ईश्वरीय अप्रसन्नता या आध्यात्मिक निंदा का विषय बन जाएगा या बना दिया जाएगा,

तो उसे उप-धारा (1) के अर्थ के भीतर ऐसे उम्मीदवार या मतदाता के चुनावी अधिकार के स्वतंत्र प्रयोग में हस्तक्षेप करने वाला समझा जाएगा।

(3) सार्वजनिक नीति की घोषणा या सार्वजनिक कार्रवाई का वादा, या किसी चुनावी अधिकार में हस्तक्षेप करने के इरादे के बिना किसी कानूनी अधिकार का मात्र प्रयोग, इस धारा के अर्थ में हस्तक्षेप नहीं माना जाएगा।

11. धारा 195 (1) (ए) दं प्र स का उल्लेख करना भी उचित है, जो इस प्रकार है:-

"(1) कोई भी अदालत निम्नलिखित संज्ञान नहीं लेगी -

(i) भारतीय दंड संहिता (1860 का 45) की धारा 172 से 188 (दोनों सम्मिलित) के तहत दंडनीय किसी भी अपराध का, या

(ii) ऐसा अपराध करने के लिए किसी को उकसाने/दुष्प्रेरण करने का या प्रयास करने का, या

(iii) ऐसा अपराध करने के लिए किसी आपराधिक साजिश/षड़यंत्र का, संबंधित लोक सेवक या अन्य लोक सेवक जिसके अधीन वह प्रशासनिक रूप से अधीनस्थ है, की लिखित शिकायत को छोड़कर;

...."

12. धारा 195 (1) (ए) दं प्र स के उपरोक्त वैधानिक प्रावधानों को सरल रूप से पढ़ने से पता चलता है कि पुलिस रिपोर्ट पर संज्ञेय अपराध का संज्ञान लेने की मजिस्ट्रेट की सामान्य शक्ति को इस प्रावधान द्वारा सिमित कर दिया गया है कि भा द वि की धारा 172 से 188 के तहत दंडनीय अपराध का संज्ञान केवल संबंधित लोक सेवक या उसके प्रशासनिक रूप से वरिष्ठ लोक सेवक की लिखित शिकायत पर लिया जा सकता है। दूसरे शब्दों में, एक मजिस्ट्रेट पुलिस रिपोर्ट पर भा द वि की धारा 188 के तहत दंडनीय अपराध का संज्ञान नहीं ले सकता है, हालांकि भा द वि की धारा 188 के तहत अपराध दं प्र स की अनुसूची 1 के अनुसार संज्ञेय है।

13. अब सवाल यह है कि शिकायत क्या है और क्या यह पुलिस रिपोर्ट से अलग है। शिकायत को दं प्र स की धारा 2 (घ) द्वारा परिभाषित किया गया है, जिसके

अनुसार, शिकायत का अर्थ है संहिता के तहत कार्रवाई करने के लिए मजिस्ट्रेट को मौखिक रूप से या लिखित रूप में किया गया कोई भी आरोप। लेकिन इसमें पुलिस रिपोर्ट शामिल नहीं है। यहां तक कि धारा 2(घ) के स्पष्टीकरण के तहत, संज्ञेय अपराध का खुलासा करने वाली पुलिस रिपोर्ट को शिकायत नहीं माना जाता है। धारा 2 (घ) के अनुसार, केवल ऐसी पुलिस रिपोर्ट जो किसी भी असंज्ञेय अपराध के होने का खुलासा करती है, उसे ही शिकायत माना जाता है। **दं प्र स की धारा 2 (घ) इस प्रकार है**ः-

> "**2. परिभाषाएँ-** इस संहिता में, जब तक कि संदर्भ से अन्यथा अपेक्षित न हो-
>
> (घ) **"शिकायत"** से किसी मजिस्ट्रेट के समक्ष इस संहिता के तहत कार्रवाई करने के उद्देश्य से मौखिक या लिखित रूप से किया गया कोई आरोप अभिप्रेत है कि किसी व्यक्ति, चाहे वह ज्ञात हो या अज्ञात, ने अपराध किया है, लेकिन इसमें पुलिस रिपोर्ट शामिल नहीं है।
>
> **स्पष्टीकरण--** किसी मामले में एक पुलिस अधिकारी द्वारा दी गई एक रिपोर्ट जो जांच के बाद, एक गैर-संज्ञेय/असंज्ञेय अपराध के होने का खुलासा करती है, उसे शिकायत माना जाएगा और जिस पुलिस अधिकारी द्वारा ऐसी रिपोर्ट दी जाती है, उसे शिकायतकर्ता माना जाएगा।

14. इस प्रकार, मजिस्ट्रेट पुलिस रिपोर्ट पर भा द वि की धारा 188 के तहत दंडनीय अपराध का संज्ञान लेने के लिए सक्षम नहीं है। वह ऐसे अपराध का संज्ञान केवल उस लोक सेवक की शिकायत पर ले सकता है जिसके आदेश का उल्लंघन किया गया है या प्रशासनिक रूप से किसी वरिष्ठ लोक सेवक की शिकायत पर ले सकता है।

15. धारा 195 दं प्र स का उद्देश्य धारा 195 दं प्र स में निर्दिष्ट अपराधों के लिए निजी व्यक्तियों के कहने पर द्वेष या दुर्भावना से प्रेरित परेशान करने वाले अभियोजन से व्यक्तियों की रक्षा करना है।

16. माननीय उच्चतम न्यायालय द्वारा यह भी लगातार अभिनिर्धारित किया गया है कि धारा 195 दं प्र स के तहत प्रावधान अनिवार्य हैं और न्यायालय को उसमें उल्लिखित किसी भी अपराध का संज्ञान लेने का कोई अधिकार क्षेत्र नहीं है, जब तक कि धारा 195 दं प्र स के संदर्भ में संबंधित लोक सेवक की लिखित शिकायत न हो, जिसके बिना भा द वि की धारा 188 के तहत दंडनीय अपराध का मुकदमा शुरू से ही अमान्य/शुन्य हो जाता है।

17. इस सन्दर्भ में, कोई भी **यू. पी. राज्य बनाम माता भिख मामला [1994 (4) एस. सी. सी. 95],** का उल्लेख कर सकता है। जिसमें माननीय उच्चतम न्यायालय ने निम्न प्रकार से निर्णय दिया हैः-

> **"6.** इस धारा का उद्देश्य व्यक्तियों को उसमें निर्दिष्ट अपराधों के लिए निजी व्यक्तियोंके कहने पर द्वेष या दुर्भावना या स्वभाव की तुच्छता से प्रेरित व्यक्ति द्वारा अपर्याप्त सामग्री या अपर्याप्त आधारों पर परेशान करने वाले अभियोजन से बचाना है।इस धारा के प्रावधान, निस्संदेह, अनिवार्य हैं और न्यायालय को उसमें उल्लिखित किसी भी अपराध का संज्ञान लेने का कोई अधिकार क्षेत्र नहीं है, जब तक कि उस धारा द्वारा आवश्यक 'संबंधित लोक सेवक' की लिखित शिकायत न हो, जिसके बिना दंड संहिता, 1860 की धारा 188 के तहत मुकदमा शुरू से ही अमान्य हो जाता है। *दौलत राम बनाम पंजाब राज्य [1962 सुपरा 2 एससीआर 812]* का मामला देखा जा सकताहा है। दूसरे शब्दों में यह कहना कि संबंधित लोक सेवक द्वारा लिखित शिकायत उन लोगों के खिलाफ भा द वि की धारा 188 के तहत आपराधिक कार्यवाही शुरू करने के लिए अनिवार्य है, जो

<u>इस जानकारी के साथ कि एक लोक सेवक द्वारा एक आदेश जारी किया गया है, जिसमें या तो 'किसी निश्चित कार्य से दूर रहने का निर्देश दिया गया है, या कुछ आदेश लेने के लिए, अपने कब्जे में या अपने प्रबंधन के तहत कुछ संपत्ति के साथ' उस आदेश की अवज्ञा करते हैं</u>। फिर भी, जब अदालत अपने विवेकाधिकार से गलत काम करने वालों पर मुकदमा चलाने के लिए अनिच्छुक होती है, तो किसी भी निजी शिकायतकर्ता को अपनी व्यक्तिगत क्षमता में कोई आपराधिक कार्यवाही शुरू करने की अनुमति नहीं दी जा सकती है क्योंकि धारा को पढ़ने से ही यह स्पष्ट हो जाएगा कि कोई भी अदालत भा द वि की धारा 172 से 188 के तहत दंडनीय किसी भी अपराध का संज्ञान नहीं ले सकती है, सिवाय 'संबंधित लोक सेवक' या किसी अन्य लोक सेवक की लिखित शिकायत के, जिसके वह (वह लोक सेवक जिसने वह आदेश जारी किया है) प्रशासनिक रूप से अधीनस्थ है।

7. धारा 195 (1) (ए) के सरसरी पठन से पता चलता है कि यदि कोई संबंधित लोक सेवक जिसने कोई आदेश जारी किया है जिसका पालन नहीं किया गया है या जिसकी अवज्ञा की गई है, वह शिकायत करना पसंद नहीं करता है या शिकायत देने से इनकार करता है, तो यह उस वरिष्ठ लोक सेवक के लिए खुला है जिसके लिए आदेश पारित करने वाला अधिकारी शुरू में प्रशासनिक रूप से अधीनस्थ है, वह अपने अधीनस्थ द्वारा घोषित आदेश की अवज्ञा के संबंध में शिकायत को प्राथमिकता दे सकता है।'अधीनस्थ' शब्द का अर्थ है प्रशासनिक रूप से अधीनस्थ यानी कोई अन्य लोक सेवक जो उसका आधिकारिक वरिष्ठ है और जिसके प्रशासनिक नियंत्रण में वह काम करता है।"

(जोर दिया गया)

18. यहाँ पर **सी. मुनियप्पन बनाम टी. एन. राज्य, (2010) 9 एस. सी. सी. 567** का उल्लेख करना भी लाभदायक होगा। जिसमें माननीय सर्वोच्च न्यायालय ने निम्नलिखित निर्णय दिया हैः .

> **“33.** इस प्रकार, उपरोक्त को ध्यान में रखते हुए, कानून को इस प्रभाव से संक्षेपित किया जा सकता है कि लोक सेवक द्वारा एक शिकायत होनी चाहिए जिसके वैध आदेश का पालन नहीं किया गया है। शिकायत लिखित में होनी चाहिए।दंड प्रक्रिया संहिता की धारा 195 के प्रावधान अनिवार्य हैं।इसका पालन न करने से अभियोजन पक्ष और अन्य सभी परिणामी आदेश दूषित हो जाएंगे।अदालत ऐसी शिकायत के बिना मामले का संज्ञान नहीं ले सकती है। ऐसी शिकायत के अभाव में, मुकदमा और दोषसिद्धि अधिकार क्षेत्र के बिना होने के कारण शुरू से ही शून्य होगी।”

(जोर दिया गया)

19. **अपूर्वा घिया बनाम छत्तीसगढ़ राज्य, 2020 एस. सी. सी. ऑनलाइन सी.एच् एच् 454**, मामले में छत्तीसगढ़ उच्च न्यायालय ने भा द वि की धारा 188 और धारा 195 दं प्र स के संदर्भ में विभिन्न न्यायिक उदाहरणों का उल्लेख करने के बाद निम्नलिखित निर्णय दिया हैः .

> **“32.** उच्चतम न्यायालय (सुपरा) और मद्रास उच्च न्यायालय (सुपरा) के उनके अध्यक्षों द्वारा दिए गए उपरोक्त निर्णयों के संदर्भ में, यह स्पष्ट है कि भा द वि की धारा 188 के तहत दंडनीय अपराध के लिए किसी आरोपी पर मुकदमा चलाने के लिए, संहिता की धारा 195(1)(ए)(i) के तहत परिकल्पित प्रक्रिया से गुजरना अनिवार्य है, यानी संबंधित लोक सेवक या किसी अन्य लोक सेवक की लिखित शिकायत, जिसके वह अधीनस्थ है, अन्यथा भा द वि की

धारा 188 के तहत अपराध का संज्ञान नहीं लिया जा सकता है और यदि इस अनिवार्य प्रक्रिया का पालन नहीं किया जाता है तो भा द वि की धारा 188 के तहत अपराध के लिए पूरे अभियोजन को शुरुआत से ही अमान्य कर दिया जाएगा, क्योंकि संहिता की धारा 195 संहिता की धारा 190 में निहित सामान्य नियम का एक अपवाद है जिसमें कोई भी व्यक्ति शिकायत करके कानून को लागू कर सकता है।संहिता की धारा 195 के प्रावधान अनिवार्य हैं और इसका पालन न करने से पूरी प्रक्रिया शुरू से ही और बिना अधिकार क्षेत्र के भी अमान्य हो जाएगी। चूंकि भा द वि की धारा 188 के तहत अपराध का संज्ञान संहिता की धारा 2 (घ) के अर्थ के भीतर संबंधित लोक सेवक द्वारा दायर लिखित शिकायत के आधार पर लिया जा सकता है, इसलिए भा द वि की धारा 188 के तहत अपराध को संज्ञेय अपराध होने के नाते संहिता की धारा 2 (घ) में संलग्न स्पष्टीकरण द्वारा भी नहीं बचाया जाता है, क्योंकि संहिता की धारा 2 (घ) के स्पष्टीकरण के अनुसार, जांच के बाद पुलिस अधिकारी द्वारा दी गई गैर-संज्ञेय/असंज्ञेय अपराध की रिपोर्ट को केवल शिकायत के रूप में माना जाता है और शिकायत करने वाले व्यक्ति को शिकायतकर्ता के रूप में माना जाता है और पुलिस रिपोर्ट या प्रथम सूचना रिपोर्ट को एक शिकायत नहीं माना जाता है, और आगे, आरोप पत्र पुलिस अधिकारी की रिपोर्ट है। इसलिए, भा द वि की धारा 188 के तहत अपराध के लिए संहिता की धारा 154 के तहत प्रथम सूचना रिपोर्ट भी दर्ज नहीं की जा सकती है, क्योंकि जांच के बाद प्रथम सूचना रिपोर्ट का पंजीकरण संहिता की धारा 173 (8) के तहत पुलिस रिपोर्ट में तब्दील हो जाएगा जिसे संहिता की धारा 190 के तहत मजिस्ट्रेट द्वारा संज्ञान नहीं लिया जा सकता है। क्योंकि भा द वि की धारा 188 के तहत अपराध के लिए प्रथम सूचना रिपोर्ट का पंजीकरण वर्जित है।"

(जोर दिया गया)

20. मैं राज्य के लिए विद्वान एपीपी के समर्पित स्पष्टिकरण से भी सहमत होने में असमर्थ पाता हूं कि ललिता कुमारी मामले (सुपरा) के आलोक में, पुलिस धारा 154 दं प्र स के तहत प्राथमिकी दर्ज करने के लिए कर्तव्यबद्ध है, यदि उसे आईपीसी की धारा 188 के तहत दंडनीय अपराध के बारे में जानकारी प्राप्त होती है, क्योंकि आईपीसी की धारा 188 के तहत अपराध संज्ञेय है। यहाँ **भारत संघ बनाम अशोक कुमार शर्मा, (2021) 12 एस. सी. सी. 674** का उल्लेख करना उचित है, जिसमें **माननीय सर्वोच्च न्यायालय** औषधि और प्रसाधन सामग्री अधिनियम, 1940 के तहत दंडनीय अपराध के लिए प्रथम सूचना रिपोर्ट दर्ज करने के संदर्भ में ललिता कुमारी मामले (सुपरा) में निर्धारित सिद्धांतों की प्रयोज्यता पर विचार कर रहा था। यहाँ, 1940 के अधिनियम की धारा 32 को ध्यान में रखते हुए, जो अपराध के संज्ञान से संबंधित है और धारा 195 दं प्र स जैसे समान प्रावधान प्रदान करती ह, माननीय सर्वोच्च न्यायालय ने अभिनिर्धारित किया कि ललिता कुमारी मामले (सुपरा) में निर्धारित सिद्धांत औषधि और प्रसाधन सामग्री अधिनियम, 1940 के तहत प्राथमिकी दर्ज करने पर लागू नहीं हो सकते हैं, और निम्नानुसार टिप्पणी की:- .

" ललिता कुमारी बनाम उत्तर प्रदेश राज्य का प्रभाव

> **80.** उक्त मामले में, इस न्यायालय की एक संविधान पीठ ने निर्णय दिया है कि सीआरपीसी की धारा 154 के तहत प्राथमिकी दर्ज करना अनिवार्य है, यदि जानकारी किसी संज्ञेय अपराध के होने का खुलासा करती है और कोई प्रारंभिक जांच की अनुमति वैसी स्थिति में नहीं है। आगे यह अभिनिर्धारित किया गया कि प्रारंभिक जाँच केवल यह पता लगाने के लिए की जा सकती है कि क्या एक संज्ञेय अपराध का खुलासा किया गया है या नहीं, यदि प्राप्त जानकारी एक संज्ञेय अपराध का खुलासा नहीं करती है, लेकिन ऐसी जाँच की आवश्यकता का संकेत देती है। न्यायालय ने कुछ ऐसे मामलों का भी संकेत दिया है जहां

प्रत्येक मामले के तथ्यों और परिस्थितियों के आधार पर प्रारंभिक जांच की जा सकती है। इनमें वैवाहिक विवाद, वाणिज्यिक अपराध और ऐसे मामले शामिल हैं जहां असामान्य देरी/बाधाएं होती हैं। इस न्यायालय ने यह भी अभिनिर्धारित किया कि उपरोक्त सभी स्थितिया उन सभी स्थितियों को शामिल नहीं करती जिनके लिए प्रारंभिक जांच की आवश्यकता हो सकती हैं।

81. हम सोचेंगे कि यह न्यायालय, उक्त मामले में, अधिनियम के तहत किसी मामले या अधिनियम के तहत मामलों के समान मामलों पर विचार नहीं कर रहा था, और हम सोचेंगे कि हमने जो चर्चा की है और दंड प्रक्रिया संहिता और अधिनियम की धारा 32 के प्रावधानों के संबंध में, ललिता कुमारी [ललिता कुमारी बनाम उत्तर प्रदेश राज्य, (2014) 2 एस. सी. सी. 1:(2014) 1 एस. सी. सी. (सी. आर. आई.) 524] में प्रतिपादित सिद्धांत तब आकर्षित नहीं होता है जब एक पुलिस अधिकारी के समक्ष अधिनियम के अध्याय IV के तहत अपराध करने की जानकारी दी जाती है जिसके लिए धारा 154 सी. आर. पी. सी. के तहत एक प्रथम सूचना रिपोर्ट का पंजीकरण अनिवार्य होता है।"

21. इसी तरह धारा 195 दं प्र स के आलोक में, ललिता कुमारी मामले (सुपरा) में निर्धारित सिद्धांत भा द वि की धारा 188 के तहत दंडनीय अपराध के लिए प्रथम सूचना रिपोर्ट दर्ज करने पर लागू नहीं होंगे, हालांकि यह संज्ञेय है। सक्षम लोक सेवक को भा द वि की धारा 188 के तहत दंडनीय अपराध के लिए अभियुक्त पर मुकदमा चलाने के लिए मजिस्ट्रेट के समक्ष शिकायत दर्ज करने की आवश्यकता होती है और तभी मजिस्ट्रेट अपराध का संज्ञान ले सकता है।

22. मैं यह भी पता हु कि अन्यथा भी, लिखित रिपोर्ट में लगाए गए आरोप के अनुसार भा द वि की धारा 188 के तहत कोई *प्रथम दृष्टया* मामला नहीं बनता है।

भा द वि की धारा 188 के तहत अपराध के लिए, निम्नलिखित **तत्वों** को संतुष्ट करने की आवश्यकता हैः

> "(क) लोक सेवक द्वारा कोई आदेश जारी किया जाना चाहिए;
>
> (ख) कि ऐसा लोक सेवक कानूनी रूप से इसे जारी करने के लिए सशक्त है;
>
> (ग) कि ऐसे आदेश की जानकारी रखने वाला व्यक्ति और जिसे इस तरह के आदेश द्वारा कुछ कार्य करने से बचने या अपने कब्जे में और अपने प्रबंधन के तहत कुछ संपत्ति के साथ कुछ आदेश लेने का निर्देश दिया गया है, उसने अवज्ञा की है; और (घ) ऐसी अवज्ञा कारण बनती है या ऐसे कारण की प्रवृति बनती है:-
>
> > (i) कानूनी रूप से नियोजित किसी भी व्यक्ति के लिए बाधा, झुंझलाहट या जोखिम; या
> >
> > (ii) मानव जीवन, स्वास्थ्य या सुरक्षा के लिए खतरा; या
> >
> > (iii) दंगा या झगड़ा।"

23. लेकिन लिखित रिपोर्ट के अवलोकन से, यह स्पष्ट रूप से पता चलता है कि भा द वि की धारा 188 के तहत अपराध के किसी भी अन्य तत्व को संतुष्ट करने की बात तो छोड़िए, उस आदेश जो घोषित हो का कोई संदर्भ नहीं है और अवज्ञा किया गया है।

24. मैं आगे पाता हूँ कि भा द वि की धारा 171सी दंडात्मक प्रावधान नहीं है। यह केवल "चुनाव में अनुचित प्रभाव" को परिभाषित करता है। यह भा द वि की धारा 171एफ है, जो चुनाव में अनुचित प्रभाव या प्रतिरूपण के लिए सजा का प्रावधान करती है। लेकिन सूचना देने वाले द्वारा लिखित रिपोर्ट में लगाए गए आरोप के अनुसार

धारा 171एफ भी आकर्षित नहीं होती है। ऐसा कोई आरोप नहीं है कि याचिकाकर्ता ने किसी भी उम्मीदवार या मतदाता को धमकी दी है या उकसाया है या उकसाने का प्रयास किया है। इसलिए, भा द वि की धारा 171सी के साथ पठित धारा 171एफ के तहत भी कोई *प्रथम दृष्टया* अपराध नहीं बनता है।

25. इसके अलावा, मुझे लगता है कि भा द वि की धारा 171 एफ के तहत दंडनीय अपराध गैर-संज्ञेय है और इसलिए, धारा 155 दं प्र स के अनुसार पुलिस न तो प्राथमिकी दर्ज कर सकती है, न ही अपने दम पर आरोप की जांच कर सकती है। धारा 155 दं प्र स के अनुसार, यदि किसी पुलिस स्टेशन के किसी पुलिस अधिकारी को गैर-संज्ञेय अपराध करने के संबंध में कोई जानकारी दी जाती है, तो पुलिस अधिकारी को सूचना देने वाले को मजिस्ट्रेट के पास भेजने की आवश्यकता होती है। पुलिस अधिकारी उस मजिस्ट्रेट के आदेश के बिना गैर-संज्ञेय अपराध से जुड़े मामले की जांच करने के लिए भी अधिकृत नहीं है, जिसे इस तरह के मामले की सुनवाई करने या मामले को सुनवाई के लिए सौपनें का अधिकार है। **धारा 155 दं प्र स निम्नानुसार है:**

> **"155. गैर-संज्ञेय/असंज्ञेय मामलों और ऐसे मामलों की जांच के बारे में जानकारी-** (1) जब किसी पुलिस थाने के प्रभारी अधिकारी को उस थाने की सीमा के भीतर किसी गैर-संज्ञेय/असंज्ञेय अपराध के घटित होने की जानकारी दी जाती है तो वह ऐसे अधिकारी द्वारा रखी जाने वाली पुस्तक में जानकारी का सार दर्ज करेगा या दर्ज कराएगा, जो राज्य सरकार इस संबंध में निर्धारित करे और सूचना देने वाले को मजिस्ट्रेट के पास भेजेगा।
>
> (2) कोई भी पुलिस अधिकारी किसी गैर-संज्ञेय मामले की जांच मजिस्ट्रेट के आदेश के बिना नहीं करेगा, जिसे इस तरह के मामले की सुनवाई करने या मामले को सुनवाई के लिए सौंपने की शक्ति है।

(3) इस तरह का आदेश प्राप्त करने वाला कोई भी पुलिस अधिकारी जांच के संबंध में उतनी ही शक्तियों का प्रयोग कर सकता है (वारंट के बिना गिरफ्तार करने की शक्ति को छोड़कर) जितनी पुलिस स्टेशन का प्रभारी अधिकारी संज्ञेय मामले में कर सकता है।

(4) जहां कोई मामला दो या दो से अधिक अपराधों से संबंधित है, जिनमें से कम से कम एक संज्ञेय है, तो मामला एक संज्ञेय मामला माना जाएगा, इसके बावजूद कि अन्य अपराध असंज्ञेय हैं।"

(जोर दिया गया)

26. इसलिए, भा द वि की धारा 171सी के साथ पठित धारा 171एफ के मामले में, न तो प्रथम सूचना रिपोर्ट बनाए रखने योग्य है और न ही कोई पुलिस रिपोर्ट टिकाऊ है।

27. मैंने पहले ही चर्चा की है कि भा द वि की धारा 188 के मामले में भी, एक मजिस्ट्रेट को धारा 195 (1) (ए) दं प्र स में प्रदान की गई प्रक्रिया के आलोक में केवल सक्षम लोक सेवक की शिकायत पर संज्ञान लेने की आवश्यकता है, न कि पुलिस रिपोर्ट पर।

28. इसलिए, आक्षेपित आदेश कानून की नजर में टिकाऊ नहीं है और इसलिए, धारा 482 दं प्र स के तहत खारिज किये जाने योग्य है। वर्तमान मामला **हरियाणा राज्य बनाम भजन लाल, [1992 पूरक (1) एस. सी. सी. 335]** के पैरा 102 के उप-पैरा (1) और (6) में माननीय उच्चतम न्यायालय द्वारा दिए गए दिशानिर्देशों द्वारा पूरी तरह से कवर किया गया है। क्योंकि न तो कोई अपराध *प्रथम दृष्टया* बनाया गया है, और न ही अपनाई गई प्रक्रिया कानून में अनुमत है। **भजन लाल मामले (सुपरा)** का प्रासंगिक पैरा इस प्रकार हैः

"**102.** अध्याय XIV के तहत संहिता के विभिन्न प्रासंगिक प्रावधानों की व्याख्या और अनुच्छेद 226 के तहत असाधारण शक्ति के प्रयोग या संहिता की धारा 482 के तहत अंतर्निहित शक्तियों से संबंधित निर्णयों की एक श्रृंखला में इस न्यायालय द्वारा प्रतिपादित कानून के सिद्धांतों की पृष्ठभूमि में, हम निम्नलिखित श्रेणियों के मामलों को उदाहरण के रूप में देते हैं, जिसमें ऐसी शक्ति का प्रयोग या तो किसी भी अदालत की प्रक्रिया के दुरुपयोग को रोकने के लिए या अन्यथा न्याय के उद्देश्यों को सुरक्षित करने के लिए किया जा सकता है हालांकि किसी भी सटीक, स्पष्ट रूप से परिभाषित और पर्याप्त रूप से व्यवस्थित और लचीले दिशानिर्देशों को निर्धारित करना संभव नहीं हो सकता है। कठोर सूत्र और असंख्य प्रकार के मामलों की एक विस्तृत सूची देना जिसमें इस तरह की शक्ति का प्रयोग किया जाना चाहिए।

<u>(1) जहां प्रथम सूचना रिपोर्ट या शिकायत में लगाए गए आरोप, भले ही उन्हें उनके अंकित मूल्य पर लिया गया हो और उन्हें पूरी तरह से स्वीकार किया गया हो, प्रथम दृष्टया कोई अपराध नहीं है या आरोपी के खिलाफ मामला नहीं बनता ।</u>

....

<u>(6) जहाँ संहिता या संबंधित अधिनियम के किसी भी प्रावधान में (जिसके अधीन कोई आपराधिक कार्यवाही संस्थित की जाती है) के किसी भी प्रावधान में कार्यवाही जारी रखने पर स्पष्ट कानूनी रोक है और/या जहाँ संहिता या संबंधित अधिनियम में पीडित पक्ष की शिकायत के लिए प्रभावशाली निवारण करने वाला कोई विशिष्ट प्रावधान है।</u>

...."

(जोर दिया गया)

29. तदनुसार, वर्तमान याचिका को स्वीकृत करते हुए आक्षेपित आदेश को रद्द किया जाता है और इससे उत्पन्न आपराधिक कार्यवाही को अपस्त किया जाता है।

(जितेंद्र कुमार, न्यायमूर्ति)

शोएब/रमेश -

खंडन (डिस्क्लेमर)- स्थानीय भाषा में निर्णय के अनुवाद का आशय, पक्षकारों को इसे अपनी भाषा में समझने के उपयोग तक ही सीमित है और अन्य प्रयोजनार्थ इसका उपयोग नही किया जा सकता । समस्त व्यवहारिक, कार्यालयी, न्यायिक एवं सरकारी प्रयोजनार्थ, निर्णय का अंग्रेजी संस्करण ही प्रमाणिक होगा साथ ही निष्पादन तथा कार्यान्वयन के प्रयोजनार्थ अनुमान्य होगा।